।। ओ३म्।।

वानप्रस्था गुलाबी देवी आर्या दिव्य स्मृति ग्रन्थमाला –

भाग-१०

वैदिक सूक्त

(वेदों के चुनिन्दा सूक्त)

संकलन :

आचार्य राहुलदेव शास्त्री

संयोजक :

वानप्रस्थ सत्यनारायण आर्य

सुजानगढ़, कोलकाता, रायपुर, सिलीगुड़ी

(कुलपति-गुरुकुल हरिपुर, उड़ीसा)

सम्पादक :

आचार्य राहुलदेव शास्त्री व्याकरणाचार्य

(आर्य समाज बड़ाबाजार, कोलकाता)

इस पुस्तिका का विमोचन यशोदा देवी जी पुगलिया, नई दिल्ली (पुत्री वा. सत्यनारायण आर्य एवं वा. गुलाबी देवी आर्या) के कर-कमलों द्वारा आर्ष गुरुकुल महाविद्यालय, नर्मदापुरम्, होशंगाबाद के शताब्दी समारोह के शुभ अवसर पर कार्तिक शुक्ल दशमी वि. सं. २०६८ तदनुसार ५ नवम्बर २०११ को गुरुकुल के पवित्र स्थली में सम्पन्न हुआ।

।। ओ३म्।।

सम्पादकीय

'वैदिक सूक्त' नामक इस ट्रेक्ट में चारों वेदों के प्रसिद्ध एवं लोक व्यवहार में आने वाले सूक्तों को संग्रह किया गया है। जिसमें कुछ सूक्त वेदों में क्रमशः मन्त्रानुक्रम से प्राप्त होते हैं और कुछेक ऐसे सूक्त हैं, जिनका विद्वानों ने अर्थादि के आधार पर विभिन्न स्थानों के मंत्रों का संकलन कर सूक्त बनाया है। विश्वभर के समस्त आर्यसमाजों के साप्ताहिक सत्संगों में संगठन सूक्त का पाठ संगठन मजबूत बनाने की कामना से किया जाता है। गुरुकुलों में मन्त्रोच्चारण के अभ्यास हेतु पुरुषसूक्त ३२वाँ, ३६वाँ अध्याय और ईशोपनिषद् के नाम से प्रसिद्ध ४०वाँ अध्याय का पाठ करवाया जाता है, जो कि अर्थ आदि के दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण है। इसके साथ ही प्रातः जागरण, शिवसंकल्प सूक्त प्रतिदिन वर्त्तने के लिए है। स्वस्तिवाचन, शान्तिसूक्त, विशेष अवसरों, पर्वों पर यज्ञ से पूर्व पढ़े जाते हैं। इनके अर्थ भी महान् हैं। ऐसे कुछ विशेष अवसरों पर वैदिक श्रीसूक्त वाणिज्य सूक्त आदि का यज्ञों में विनिमय किया जाता है। अथर्ववेद का 'ब्रह्मचर्य सूक्त' प्रत्येक विद्यार्थी एवं स्नातक के लिए अर्थ सहित पठनीय एवं ग्राह्य है। ऐसे ही ऋग्वेदीय नासदीय सूक्त में सृष्टि चक्र का वर्णन सृष्टि से पूर्व की बातें प्रत्येक भौगोलिक जलवायु सृष्टि विज्ञान से सम्बन्ध रखने वाले व्यक्ति के लिए गम्भीरता से चिन्तन करने योग्य है। स्वतंत्रता दिवस पर पढ़ा जाने वाला 'स्वराज्य सूक्त' भी प्रत्येक देशभक्त व्यक्ति को पढ़ना चाहिए।

वैदिक सिद्धांतानुसार यह सर्वविदित है कि मन्त्रोचारण करने, पाठ एवं यज्ञ में विनियोग करने मात्र से कभी मंत्र फलीभूत नहीं होता। वरन् मंत्रों का पाठ, उसका व्याकरण पद, समास आदि के द्वारा अर्थ जानकर उस अर्थानुसार आचरण करने से मंत्र फलीभूत होता है। वेदपाठ से वेदों की रक्षा, वाणी में माधुर्य, वातावरण में पवित्रता, यज्ञ की वृद्धि, ध्वनि प्रदूषण एवं अशुद्ध पर्यावरण से रक्षा होती है, किन्तु उसका पूर्णतया लोभ तो अर्थ

वैदिक-श्रीसूक्तम्

ओ३म्। वाजश्च मे प्रसवश्च मे प्रयतिश्च मे प्रसितिश्च मे धीतिश्च मे क्रतुश्च मे स्वरश्च मे श्लोकश्च मे श्रवश्च मे श्रुतिश्च मे ज्योतिश्च मे स्वश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्।।१।।

– यजुः० अ० १८। मं० १

प्राणश्च मेऽपानश्च मे व्यानश्च मेऽसुश्च मे चित्तं च मऽआधीतं च मे वाक् च मे मनश्च मे चक्षुश्च मे श्रोत्रं च मे दक्षश्च मे बलं च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्।।२।।

– यजुः० अ० १८। मं० २

ओजश्च मे सहश्च मऽआत्मा च मे तनूश्च मे शर्म च मे वर्म च मऽङ्गानि च मेऽस्थीनि च मे परूंषि च मे शरीराणि च मऽआयुश्च मे जरा च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्।।३।।

– यजुः० अ० १८। मं० ३

ज्यैष्ठ्यं च मऽआधिपत्यं च मे मन्युश्च मे भामश्च मेऽमश्च मेऽम्भश्च मे जेमा च मे महिमा च मे वरिमा च मे प्रथिमा च मे वर्षिमा च मे द्राघिमा च मे वृद्धं च मे वृद्धिश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्।।४।।

– यजुः० अ० १८। मं० ४

सदसस्पतिमद्भुतं प्रियमिन्द्रस्य काम्यम्।
सनिं मेधामयासिषꣳस्वाहा।।५।।

– यजुः० अ० ३२। मं० १३

यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते।
तया मामद्य मेधयाग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा।।६।।

– यजुः० अ० ३२। मं० १४

मेधां मे वरुणो ददातु मेधामग्निः प्रजापतिः।
मेधामिन्द्रश्च वायुश्च मेधां धाता ददातु मे स्वाहा।।७।।

– यजुः० अ० ३२। मं० १५

इदं मे ब्रह्म च क्षत्रं चोभे श्रियमश्नुताम्।
मयि देवा दधतु श्रियमुत्तमां तस्यै ते स्वाहा।।८।।

– यजु:० अ० ३२। मं० १६

मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीय।
पशूनाꣳरूपमन्नस्य रसो यशः श्रीः श्रयतां मयि स्वाहा।।९।।

– यजु:० अ० ३९। मं० ४

कया नश्चित्रऽआभुवदूती सदावृधः सखा कया शचिष्ठया वृता।।१०।।

– यजु:० अ० ३६। मं० ४

अग्ने नय सुपथा रायेऽअस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठान्ते नमऽउक्तिं विधेम।।११।।

– यजु:० अ० ५। मं० ३६

दिवो वा विष्णऽउत वा पृथिव्या महो वा विष्णऽउरोरन्तरिक्षात्।
उभा हि हस्ता वसुना पृणस्वा प्रयच्छ दक्षिणादोत सव्याद्विष्णवे त्वा।।१२।।

– यजु:० अ० ५। मं० १९

भूरिदा भूरि देहि नो मा दभ्रं भूर्या भर।
भूरि घेदिन्द्र दित्ससि।।१३।।

– ऋ० ४। ३२। २०

इन्द्र श्रेष्ठानि द्रविणानि धेहि चित्तिं दक्षस्य सुभगत्वमस्मे।
पोषं रयीणामरिष्टिंतनूनां स्वाद्मानं वाचः सुदिनत्वमह्नाम्।।१४।।

– ऋ० २। २१। ६

भूर्भुवः स्वः। प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परि ता बभूव।
यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम्।।१५।।

– ऋ० १०। १२१। १०

श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम्।
इष्णन्निषाणामुं मऽइषाण सर्वलोकं मऽइषाण।।१६।।

– यजु:० अ० ३१। मं० २२

वैदिक-सरस्वती-सूक्तम्

ओ३म्। पावका नः सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती।
यज्ञं वष्टु धिया वसुः।।१।।

– ऋग्वेद १। ३। १०

चोदयित्री सूनृतानां चेतन्ती सुमतीनाम्।
यज्ञं दधे सरस्वती।।२।।

– ऋग्वेद १। ३। ११

महो अर्णः सरस्वती प्र चेतयति केतुना।
धियो विश्वा वि राजति।।३।।

– ऋग्वेद १। ३। १२

सदसस्पतिमद्भुतं प्रियमिन्द्रस्य काम्यम्
सनिं मेधामयासिषम्।।४।।

– ऋग्वेद १। १८। ६

यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते।
तया मामद्य मेधयाग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा।।५।।

– यजुः० ३२। १४

मेधां मे वरूणो दधातु मेधामग्निः प्रजापतिः।
मेधामिन्द्रश्च वायुश्च मेधां धाता ददातु मे स्वाहा।।६।।

– यजुः० ३२। १५

अम्बितमे नदीतमे देवितमे सरस्वति।
अप्रशस्ताइव स्मसि प्रशस्तिमम्ब नस्कृधि।।७।।

– ऋग्वेद २। ४१। १६

त्वे विश्वा सरस्वति श्रितायूंषि देव्याम्।
शुनहोत्रेषु मत्स्व प्रजां देवि दिदिड्ढि नः।।८।।

– ऋग्वेद २। ४१। १७

प्र णो देवी सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती।
धीनामवित्र्यवतु।।९।।

– ऋग्वेद ६। ६१। ४

यस्त्वा देवि सरस्वत्युपब्रूते धने हिते।
इन्द्रं न वृत्रतूर्ये।।१०।।

– ऋग्वेद ६। ६१। ५

त्वं देवि सरस्वत्यवा वाजेषु वाजिनि।
रदा पूषेव नः सनिम्।।११।।

– ऋग्वेद ६। ६१। ६

उत स्या नः सरस्वति घोरा हिरण्यवर्तनिः।
वृत्राघ्नी वष्टि सुष्टुतिम्।।१२।।

– ऋग्वेद ६। ६१। ७

उत नः प्रिया प्रियासु सप्तस्वसा सुजुष्टा।
सरस्वती स्तोम्या भूत्।।१३।।

– ऋग्वेद ६। ६१। १०

सरस्वतीं देवयन्तो हवन्ते सरस्वतीमध्वरे तायमाने।
सरस्वतीं सुकृतो अह्वयन्त सरस्वती दाशुषे वार्यं दात्।।१४।।

– ऋग्वेद १०। १७। ७

सरस्वति या सरथं ययाथ स्वधाभिर्देवि पितृभिर्मदन्ती।
आसद्यास्मिन्बर्हिषि मादयस्वान-मीवा इष आ धेह्यस्मे।।१५।।

– ऋग्वेद १०। १७। ८

सरस्वतीं यां पितरो हवन्ते दक्षिणा यज्ञमभिनक्षमाणाः।
सहस्रार्घमिळो अत्र भागं रायस्पोषं यजमानेषु धेहि।।१६।।

– ऋग्वेद १०। १७। ९

वैदिक-संजीवनं सूक्तम्

ओ३म्। त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्।
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्।।१।।

– यजुर्वेद अ० ३। मं० ६०

सर्वो वै तत्र जीवति गौरश्वः पुरुषः पशुः।
यत्रेदं ब्रह्म क्रियते परिधिर्जीवनाय कम्।।२।।

– अथर्व० ८। २। २५

तनूपाऽअग्नेसि तन्वं मे पाह्यायुर्दाऽअग्नेस्यायुर्मे देहि वर्चोदाऽअग्नेसि वर्चो मे देहि। अग्ने यन्मे तन्वाऽऊनं तन्मऽआपृण।।३।।

– यजुः० अ० ३। मं० १७

इन्धानास्त्वा शतँ हिमा द्युमन्तँ समिधीमहि।
वयस्वन्तो वयस्कृतँ सहस्वन्तः सहस्कृम्।
अग्ने सपत्नदम्भनमदब्धासोऽअदाभ्यम्। चित्रावसो स्वस्ति ते पारमशीय।।४।।

– यजुः० ३। मं० १८

पुनर्मनः पुनरायुर्मऽआगन्पुनः प्राणः पुनरात्मा मऽआगन् पुनश्चक्षुः पुनः श्रोतं मऽआगन्। वैश्वानरोऽअदब्धस्तनूपाऽअग्निर्नः पातु दुरितादवद्यात्।।५।।

– यजुः० ४। १५

ऋचं वाचं प्रपद्ये मनो यजुः प्रपद्ये साम प्राणं प्रपद्ये चक्षुः श्रोत्रं प्रपद्ये।
वागोजः सहौजो मयि प्राणापानौ।।६।।

– यजुः० ३६। १

प्राणश्च मेऽपानश्च मे व्यानश्च मेऽसुश्च मे चित्तं च मऽआधीतं च मे वाक्च मे मनश्च मे चक्षुश्च मे श्रोतं च मे दक्षश्च मे बलं च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्।।७।।

–यजुः० १८। २

ओजश्च मे सहश्च मऽआत्मा च मे तनूश्च मे शर्म च मे वर्म च मेऽगांनि च मेऽस्थीनि च मे परुषि च मे शरीराणि च मऽआयुश्च मे जरा च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्।।८।।

–यजु:० १८। ३

तेजोऽसि तेजो मयि धेहि वीर्यमसि वीर्यं मयि धेहि बलमसि बलं मयि धेह्योजोस्योजो मयि धेहि मन्युरसि मन्युं मयि धेहि सहोसि सहो मयि धेहि।।९।।

तत्त्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदा शास्ते यजमानो हविर्भिः।
अहेळमानो वरुणेह बोध्युरुशँ स मा नऽआयुः प्रमोषीः।।१०।।

–यजु:० १८। ४९

प्राणं मे पाह्यपानं मे पाहि व्यानं मे पाहि चक्षुर्मऽउर्व्या विभाहि श्रोतं मे श्लोकय। अपः पिन्वौषधीर्जिन्व द्विपादव चतुष्पात्पाहि दिवो वृष्टिमेरय।।११।।

– यजु:० १४। ८

परं मृत्योऽअनुपरेहि पन्थां यस्तेऽअन्यऽइतरो देवयानात्।
चक्षुष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि मा नः प्रजाꣳरीरिषो मोत वीरान्।।१२।।

इमं जीवेभ्यः परिधिं दधामि मैषां नु गादपरोऽअर्थमेतम्।
शतं जीवन्तु शरदः पुरुचीरन्तर्मृत्युं दधतां पर्वतेन।।१३।।

– यजु:० ३५। १५

भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।
स्थिरैरंगैस्तुष्टुवाꣳ सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः।।१४।

– यजुर्वेद अ० २४। मं० २१

तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतँ शृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात्।।१५।।

– यजु:० ३६। २४

त्र्यायुषं जमदग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषम्।
यद्देवेषु त्र्यायुषं तन्नोऽअस्तु त्र्यायुषम्।।१६।।

– यजु:० ३। ६२

वैदिक-वाणिज्य सूक्तम्

ओ३म्। इन्द्रमहं वणिजं चोदयामि स न ऐतु पुरएता नो अस्तु।
नुदन्नरातिं परिपन्थिनं मृगं स ईशानो धनदा अस्तु मह्यम्।।१।।

ये पन्थानो बहवो देवयाना अन्तरा द्यावापृथिवी संचरन्ति।
ते मा जुषन्तां पयसा घृतेन यथा क्रीत्वा धनमाहराणि।।२।।

इध्मेनाग्न इच्छमानो घृतेन जुहोमि हव्यं तरसे बलाय।
यावदीशे ब्रह्मणा वन्दमान इमां धियं शतसेयाय देवीम्।।३।।

इमामग्ने शरणिं मीमृषो नो यमध्वानमगाम दूरम्।
शुनं नो अस्तु प्रपणो विक्रयश्च प्रतिपणः फलिनं मा कृणोतु।
इदं हव्यं संविदानौ जुषेथां शुनं नो अस्तु चरितमुत्थितं च।।४।।

येन धनेन प्रपणं चरामि धनेन देवा धनमिच्छमानः।
तन्मे भूयो भवतु मा कनीयोऽग्ने सातघ्नो देवान्हविषा नि षेध।।५।।

येन धनेन प्रपणं चरामि धनेन देवा धनमिच्छमानः।
तस्मिन्म इन्द्रो रुचिमा दधातु प्रजापतिः सविता सोमो अग्निः।।६।।

उप त्वा नमसा वयं होतवैश्वानर स्तुमः।
स नः प्रजास्वात्मसु गोषु प्राणेषु जागृहि।।७।।

विश्वाहा ते सदमिद् भरेमाश्वायेव तिष्ठते जातवेदः।
रायस्पोषेण समिषा मदन्तो मा ते अग्ने प्रतिवेशा रिषाम्।।८।।

–अथर्ववेद काण्ड ३। सूक्त १५। मन्त्र १-८

अभि नो नर्यं वसु वीरं प्रयतदक्षिणम्।
वामं गृहपतिं नय।।९।।

– ऋग्वेद, मण्डल ६। सूक्त ५३। मं० २

आदित्सन्तं चिदाघृणे पूषन्दानाय चोदय।
पणेश्चिद्वि म्रदा मनः।।१०।।

– ऋ० ६।५३।३

संपूषन्विदुषा नय योऽअंजसानुशासति।
यऽएवेदमिति ब्रवत्।।११।।

– ऋ० ६। ५४। १

समु पूष्णा गमेमहि यो गृहाँऽअभिशासति।
इमऽएवेति च ब्रवत्।।१२।।

– ऋ० ६। ५४। २

पूष्णश्चक्रं न रिष्यति न कोशोऽव पद्यते।
नोऽअस्य व्यथते पविः।।१३।।

–ऋ० ६। ५४। ३

शृण्वन्तं पूषणं वयमिर्यमनष्टवेदसम्।
ईशानं रायऽईमहे।।१४।।

–ऋ० ६। ५४। ८

पूषन्तव व्रते वयं न रिष्येम कदा चन।
स्तोतारस्तऽइह स्मसि।।१५।।

–ऋ० ६।५४। ९

परि पूषा परस्ताद्धस्तं दधातु दक्षिणम्।
पुनर्नो नष्टमाजतु।।१६।।

– ऋ० ६। ५४। १०

पुरुष सूक्तम्

(यजुर्वेद का ३१वाँ अध्याय)

सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात्।
स भूमिं सर्वतस्पृत्वाऽत्यतिष्ठद्दशांगुलम्।।१।।

पुरुषऽएवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम्।
उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति।।२।।

एतावानस्य महिमातो ज्यायाँश्च पूरुषः।
पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि।।३।।

त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः पादोऽस्येहाभवत्पुनः।
ततो विष्वङ् व्यक्रामत्साशनानशनेऽअभि।।४।।

ततो विराडजायत विराजोऽअधि पूरुषः।
स जातोऽअत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः।।५।।

तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः सम्भृतं पृषदाज्यम्।
पशूँस्ताँश्चक्रे वायव्यानारण्या ग्राम्याश्च ये।।६।।

तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतऽऋचः सामानि जज्ञिरे।
छन्दाꣳसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत।।७।।

तस्मादश्वाऽअजायन्त ये के चोभयादतः।
गावो ह जज्ञिरे तस्मात्तस्माज्जाताऽअजावयः।।८।।

तं यज्ञं बर्हिषि प्रौक्षन् पुरुषं जातमग्रतः।
तेन देवाऽअयजन्त साध्याऽऋषयश्च ये।।९।।

यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन्।
मुखं किमस्यासीत्किं बाहू किमूरू पादाऽउच्येते।।१०।।

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्याᳬं शूद्रोऽअजायत।।११।।

चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्योऽअजायत।
श्रोत्राद्वायुश्च प्राणश्च मुखादग्निरजायत।।१२।।

नाभ्याऽआसीदन्तरिक्षँ शीर्ष्णो द्यौः समवर्त्तत।
पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकौँऽ अकल्पयन्।।१३।।
यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत।
वसन्तोऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्मेऽइध्मः शरद्धविः।।१४।।

सप्तास्यासन् परिधयस्त्रिः सप्त समिधः कृताः।
देवा यद्यज्ञं तन्वानोऽअबध्नन् पुरुषं पशुम्।।१५।।

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।
ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः।।१६।।

अद्भ्यः सम्भृतः पृथिव्यै रसाच्च विश्वकर्मणः समवर्त्तताग्रे।
तस्य त्वष्टा विदधद्रूपमेति तन्मर्त्यस्य देवत्वमाजानमग्रे।।१७।।

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्यवर्णं तमसः परस्तात्।
तमेव विदित्वाति मृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽ यनाय।।१८।।

प्रजापतिश्चरति गर्भेऽअन्तरजायमानो बहुधा वि जायते।
तस्य योनिं परि पश्यन्ति धीरास्तस्मिन्ह तस्थुर्भुवनानि विश्वा।।१९।।

यो देवेभ्यऽआतपति यो देवानां पुरोहितः।
पूर्वो यो देवेभ्यो जातो नमो रुचाय ब्राह्मये।।२०।।

रुचं ब्राह्मं जनयन्तो देवाऽअग्रे तदब्रुवन्।
यस्त्वैवं ब्राह्मणो विद्यात्तस्य देवाऽअसन्वशे।।२१।।

श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम्।
इष्णन्निषाणामुं मऽइषाण सर्वलोकं मऽइषाण।।२२।।

अथैकत्तिंशोऽध्यायः

(यजुर्वेद का ३२वाँ अध्याय)

तदेवाग्निस्तदादित्यस्तद्वायुस्तदु चन्द्रमाः।
तदेव शुक्रं तद् ब्रह्म ताऽआपः स प्रजापतिः।।१।।
सर्वे निमेषा जज्ञिरे विद्युतः पुरुषादधि।
नैनमूर्ध्वं न तिर्य्यञ्चं न मध्ये परि जग्रभत्।।२।।
न तस्य प्रतिमाऽअस्ति यस्य नाम महद्यशः।
हिरण्यगर्भऽइत्येष मा मा हिँ सीदित्येषा यस्मान्न जातऽइत्येषः।।३।।
एषो ह देवः प्रदिशोऽनु सर्वाः पूर्वो ह जातः सऽउ गर्भेऽअन्तः।
सऽएव जातः स जनिष्यमाणः प्रत्यङ् जनास्तिष्ठति सर्वतोमुखः।।४।।
यस्माज्जातं न पुरा किं चनैव य आबभूव भुवनानि विश्वा।
प्रजापतिः प्रजया सँरराणस्त्रीणि ज्योतिꣳषि सचते स षोडशी।।५।।
येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढा येन स्वः स्तभितं येन नाकः।
योऽअन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम।।६।।
यं क्रन्दसीऽअवसा तस्तभानेऽअभ्यैक्षेतां मनसा रेजमाने।
यत्राधि सूरऽउदितो विभाति कस्मै देवाय हविषा विधेम।
आपो ह यद् बृहतीर्यश्चिदापः।।७।।
वेनस्तत्पश्यन्निहितं गुहा सद्यत्र विश्वं भवत्येकनीडम्।
तस्मिन्निदँ सं च वि चैति सर्वँ सऽओतः प्रोतश्च विभूः प्रजासु।।८।।
प्र तद्वोचेदमृतं नु विद्वान् गन्धर्वो धाम विभृतं गुहा सत्।
त्रीणि पदानि निहिता गुहास्य यस्तानि वेद स पितुः पितासत्।।९।।
स नो बन्धुर्जनिता स विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा।
यत्र देवाऽअमृतमानशानास्तृतीये धामन्नध्यैरयन्त।।१०।।
परीत्य भूतानि परीत्य लोकान् परीत्य सर्वाः प्रदिशो दिशश्च।
उपस्थाय प्रथमजामृतस्यात्मनात्मानमभि सं विवेश।।११।।
परि द्यावापृथिवी सद्यऽइत्वा परि लोकान् परि दिशः परि स्वः।
ऋतस्य तन्तुं विततं विचृत्य तदपश्यत्तदभवत्तदासीत्।।१२।।

सदसस्पतिमद्‌भुतं प्रियमिन्द्रस्य काम्यम्।
सनिं मेधामयासिषँ स्वाहा।।१३।।
यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते।
तया मामद्य मेधयाग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा।।१४।।
मेधां मे वरुणो ददातु मेधामग्निः प्रजापतिः।
मेधामिन्द्रश्च वायुश्च मेधां धाता ददातु मे स्वाहा।।१५।।
इदं मे ब्रह्म च क्षत्रं चोभे श्रियमश्नुताम्।
मयि देवा दधतु श्रियमुत्तमां तस्यै ते स्वाहा।।१६।।

शिव संकल्प सूक्तम्

यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति।
दूरंगम ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।।२०।।

(यजु. ३४/१)

येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः।
यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।।२१।।

(यजु. ३४/२)

यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतम्प्रजासु।
यस्मान्नऽऋते किंचन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।।२२।।

(यजु. ३४/३)

येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत्परिगृहीतममृतेन सर्वम्।
येन यज्ञस्तायते सप्तहोता तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।।२३।।

(यजु. ३४/४)

यस्मिन्नृचः साम यजूꣳषि यस्मिन्प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः।
यास्मिँश्चित्तँ सर्वमोतं प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।।२४।।

(यजु. ३४/५)

सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिनऽइव।
हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।।२५।।

(यजु. ३४/६)

अथ षट्त्रिंशोऽध्यायः

(यजुर्वेद का ३६वाँ अध्याय)

ऋचं वाचं प्र पद्ये मनो यजुः प्र पद्ये साम प्राणं प्र पद्ये चक्षुः श्रोत्रं प्र पद्ये।
वागोजः सहौजो मयि प्राणापानौ।।१।।

यन्मे छिद्रं चक्षुषो हृदयस्य मनसो वातितृण्णं बृहस्पतिर्मे तद्दधातु।
शं नो भवतु भुवनस्य यस्पतिः।।२।।

भूर्भुवः स्वः। तत्सवितर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि।
धियो यो नः प्रचोदयात्।।३।।

कया नश्चित्रऽआ भुवदूती सदावृधः सखा। कया शचिष्ठया वृता।।४।।

कस्त्वा सत्यो मदानां मँ्हिष्ठो मत्सदन्धसः। दृढा चिदारुजे वसु।।५।।

अभी षु णः सखीनामविता जरितृणाम्। शतं भवास्यूतिभिः।।६।।

कया त्वं नऽऊत्याभि प्र मन्दसे वृषन्। कया स्तोतृभ्यऽआ भर।।७।।

इन्द्रो विश्वस्य राजति। शन्नोऽअस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे।।८।।

शन्नो मित्रः शं वरुणः शन्नो भवत्वर्य्यमा।
शन्नऽइन्द्रो बृहस्पतिः शन्नो विष्णुरुरुक्रमः।।९।।

शन्नो वातः पवताꣳ शन्नस्तपतु सूर्य्यः।
शन्नः कनिक्रदद्देवः पर्यन्योऽअभिवर्षतु।।१०।।

अहानि शं भवन्तु नः शँ्रात्रीः प्रतिधीयताम्।
शन्नऽइन्द्राग्नी भवतामवोभिः शन्नऽइन्द्रावरुणा रातहव्या।
शन्नऽइन्द्रापूषणा वाजसातौ शमिन्द्रासोमा सुविताय शंयोः।।११।।

शन्नो देवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये। शंयोरभि स्रवन्तु नः।।१२।।

स्योना पृथिवी नो भवानृक्षरा निवेशनी। यच्छा नः शर्म सप्रथाः।।१३।।

आपो हि ष्ठा मयोभुवस्ता नऽऊर्जे दधातन। महे रणाय चक्षसे।।१४।।

यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेह नः। उशतीरिव मातरः।।१५।।

तस्माऽअरं गमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ।

आपो जनयथा च नः।।१६।।

द्यौः शान्तिरन्तरिक्षँ्शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः।
वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वँ्शान्तिः शान्तिरेव
शान्तिः सा मा शान्तिरेधि ।।१७।।

दृते दृँ्ह मा मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणिभूतानि समीक्षन्ताम्। मित्रस्याहं
चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे। मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे।।१८।।

दृते दृँ्ह मा। ज्योक्ते संदृशि जीव्यासं ज्योक्ते संदृशि जीव्यासम्।।१९।।

नमस्ते हरसे शोचिषे नमस्तेऽअस्त्वर्चिषे।
अन्याँस्तेऽअस्मत्तपन्तु हेतयः पावकोऽअस्मभ्यँ्शिवो भव।।२०।।

नमस्तेऽअस्तु विद्युते नमस्ते स्तनयित्नवे।
नमस्ते भगवन्नस्तु यतः स्वः समीहसे।।२१।।

यतो यतः समीहसे ततो नोऽअभयं कुरु।
शं नः कुरु प्रजाभ्योऽभयं नः पशुभ्यः।।२२।।

सुमित्रिया नऽआपऽओषधयः सन्तु दुर्मित्रियास्तस्मै सन्तु।
योऽस्मान् द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः।।२३।।

तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्।
पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतँ्शृणुयाम शरदः शतं प्र ब्रवाम
शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात्।।२४।।

ईशोपनिषद

(यजुर्वेद का ४०वाँ अध्याय)

इशा वास्यमिद ँ सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्य स्विद्धनम्।।१।।

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छत ँ समाः।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे।।२।।

असुर्य्या नाम ते लोकाऽअन्धेन तमसावृताः।
ताँस्ते प्रेत्यापि गच्छन्ति ये के चात्महनो जनाः।।३।।

अनेजदेकं मनसो जवीयो नैनद्देवाऽआप्नुवन् पूर्वमर्षत्।
तद्धावतोऽन्यानत्येति तिष्ठत्तस्मिन्नपो मातरिश्वा दधाति।।४।।

तदेजति तन्नैजति तद्दूरे तद्वन्तिके।
तदन्तरस्य सर्वस्य तदु सर्वस्यास्य बाह्यतः।।५।।

यस्तु सर्वाणि भूतान्यात्मन्नेवानुपश्यति।
सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न विचिकित्सति।।६।।

यस्मिन्सर्वाणि भूतान्यात्मैवाभूद्विजानतः।
तत्र को मोहः कः शोकऽएकत्वमनुपश्यतः।।७।।

स पर्य्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविर ँ शुद्धमपापविद्धम्।
कविर्मनीषी परिभूः
स्वयम्भूर्याथातथ्यतोऽर्थान्व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः।।८।।

अन्धन्तमः प्रविशन्ति येऽसम्भूतिमुपासते।
ततो भूयऽइव ते तमो यऽउ सम्भत्याᳬं रताः।।९।।

अन्यदेवाहुः सम्भवादन्यदाहुरसम्भवात्।
इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विचचक्षिरे।।१०।।

सम्भूतिं च विनाशं च यस्तद्वेदोभयँ् सह।
विनाशेन मृत्युं तीर्त्वा सम्भूत्यामृतमश्नुते।।११।।

अन्धन्तमः प्रविशन्ति येऽविद्यामुपासते।
ततो भूयऽइव ते तमो यऽउ विद्यायाᳬं रताः।।१२।।

अन्यदेवाहुर्विद्यायाऽअन्यदाहुरविद्यायाः।
इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विचचक्षिरे।।१३।।

विद्यां चाविद्यां च यस्तद्वेदोभयँ् सह।
अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययाऽमृतमश्नुते।।१४।।

वायुरनिलममृतमथेदं भस्मान्तँ् शरीरम्।
ओ३म् क्रतो स्मर। क्लिबे स्मर। कृतँ् स्मर।।१५।।

अग्ने नय सुपथा रायेऽअस्मान्विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नमऽउक्तिं विधेम।।१६।।

हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्।
योऽसावादित्ये पुरुषः सोऽसावहम्। ओ३म् खं ब्रह्म।।१७।।

—x—

नासदीय सूक्तम्

नासदासीन्नो सदासीत्तदानीं नासीद्रजो नो व्योमा परो यत्।
किमावरीवः कुहकस्य शर्मन्नम्भः किमासीद्गहनं गभीरम्।।१।।

न मृत्युरासीदमृतं न तर्हि न रात्र्या अह्न आसीत्प्रकेतः।
आनीदवातं स्वधया तदेकं तस्माद्धान्यन्न परः किं चनास।।२।।

तम आसीत्तमसा गूळमग्रेऽप्रकेतं सलिलं सर्वमा इदम्।
तुच्छ्येनाभ्वपिहितं यदासीत्तपसस्तन्महिनाजायतैकम्।।३।।

कामस्तदग्रे समवर्तताधि मनसो रेतः प्रथमं यदासीत्।
सतो बन्धुमसति निरविन्दन्हृदि प्रतीष्या कवयो मनीषा।।४।।

तिरश्चीनो विततो रश्मिरेषामधः स्विदासी३दुपरि स्विदासी३त्।
रेतोधा आसन्महिमान आसन्त्स्वधा अवस्तात्प्रयतिः परस्तात्।।५।।

को अद्धा वेद क इह प्र वोचत्कुत आजाता कुत इयं विसृष्टिः।
अर्वाग्देवा अस्य विसर्जनेनाथा को वेद यत आबभूव।।६।।

इयं विसृष्टिर्यत आबभूव यदि वा दधे यदि वा न।
यो अस्याध्यक्षः परमे व्योमन्त्सो अंग वेद यदि वा न वेद।।७।।

(ऋग्वेद मं-१०, सूक्त-१२९)

ब्रह्मचर्य सूक्तम्

ब्रह्मचारीष्णंश्चरति रोदसी उभे तस्मिन्देवाः संमनसो भवन्ति।
स दाधार पृथिवीं दिवं च स आचार्यं तपसा पिपर्ति।।१।।

ब्रह्मचारिणं पितरो देवजनाः पृथग्देवा अनुसंयन्ति सर्वे।
गन्धर्वा एनमन्वायन्त्रयस्त्रिंशत्त्रिशताः षट्सहस्राः सर्वान्त्स देवांस्तपसा पिपर्ति।।२।।

आचार्य उपनयमानो ब्रह्मचारिणं कृणुते गर्भमन्तः।
तं रात्रीस्तिस्त्र उदरे बिभर्ति तं जातं द्रष्टुमभिसंयन्ति देवाः।।३।।

इयं समित्पृथिवी द्यौर्द्वितीयोतान्तरिक्षं समिधा पृणाति।
ब्रह्मचारी समिधा मेखलया श्रमेण लोकांस्तपसा पिपर्ति।।४।।

पूर्वो जातो ब्रह्मणो ब्रह्मचारी घर्मं वसानस्तपसोदतिष्ठत्।
तस्माज्जातं ब्राह्मणं ब्रह्म ज्येष्ठं देवाश्च सर्वे अमृतेन साकम्।।५।।

ब्रह्मचार्येति समिधा समिद्धः कार्ष्णं वसानो दीक्षितो दीर्घश्मश्रुः।
स सद्य एति पूर्वस्मादुत्तरं समुद्रं लोकान्त्संगृभ्य मुहुराचरिक्रत्।।६।।

ब्रह्मचारी जनयन्ब्रह्मापो लोकं प्रजापतिं परमेष्ठिनं विराजम्।
गर्भो भूत्वामृतस्य योनाविन्द्रो ह भूत्वासुरांस्ततर्ह।।७।।

आचार्यस्ततक्ष नभसी उभे इमे उर्वी गम्भीरे पृथिवीं दिवं च।
ते रक्षति तपसा ब्रह्मचारी तस्मिन्देवाः संमनसो भवन्ति।।८।।

इमां भूमिं पृथिवी ब्रह्मचारी भिक्षामा जभार प्रथमो दिवं च।
ते कृत्वा समिधावुपास्ते तयोरार्पिता भुवनानि विश्वा।।९।।

अर्वागन्यः परो अन्यो दिवस्पृष्ठाद्गुहा निधी निहितौ ब्राह्मणस्य।
तौ रक्षति तपसा ब्रह्मचारी तत्केवलं कृणुते ब्रह्मविद्वान्।।१०।।

अर्वागन्य इतो अन्यः पृथिव्या अग्नी समेतो नभसी अन्तरेमे।
तयोः श्रयन्ते रश्मयोऽधि दृढास्ताना तिष्ठति तपसा ब्रह्मचारी।।११।।

अभिक्रन्दन् स्तनयन्नरुणः शितिंगो बृहच्छेपोऽनु भूमौ जभार।
ब्रह्मचारी सिञ्चति सानौ रेतः पृथिव्यां तेन जीवन्ति प्रदिशश्चतस्त्रः।।१२।।

अग्नौ सूर्ये चन्द्रमसि मातरिश्वन्ब्रह्मचार्यप्सु समिधमा दधाति।
तासामर्चींषि पृथगभ्रे चरन्ति तासामाज्यं पुरुषो वर्षमापः।।१३।।

आचार्यो मृत्युर्वरुणः सोम ओषधयः पयः।
जीमूता आसन्त्सत्वानस्तैरिदं स्वराभृतम्।।१४।।

अमा घृतं कृणुते केवलमाचार्यो भूत्वा वरुणो यद्यदैच्छत्प्रजापतौ।
तद् ब्रह्मचारी प्रायच्छत्स्वान्मित्रो अध्यात्मनः।।१५।।

आचार्यो ब्रह्मचारी ब्रह्मचारी प्रजापतिः।
प्रजापतिर्वि राजति विराडिन्द्रोऽभवद्वशी।।१६।।

ब्रह्मचर्येण तपसा राजा राष्ट्रं विरक्षति।
आचार्यो ब्रह्मचर्येण ब्रह्मचारिणमिच्छते।।१७।।

ब्रह्मचर्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम्।
अनड्वान्ब्रह्मचर्येणाश्वो घासं जिगीर्षति।।१८।।

ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमपाघ्नत।
इन्द्रो ह ब्रह्मचर्येण देवेभ्यः स्वराभरत्।।१९।।

ओषधयो भूतभव्यमहोरात्रे वनस्पतिः।
संवत्सरः सहर्तुभिस्ते जाता ब्रह्मचारिणः।।२०।।

पार्थिवा दिव्याः पशव आरण्या ग्राम्याश्च ये।
अपक्षाः पक्षिणश्च ये ते जाता ब्रह्मचारिणः।।२१।।

पृथक्सर्वे प्राजापत्याः प्राणानात्मसु बिभ्रति।
तान्त्सर्वान्ब्रह्म रक्षति ब्रह्मचारिण्याभृतम्।।२२।।

देवानामेतत्परिषूतमनभ्यारूढं चरति रोचमानम्।
तस्माज्जातं ब्राह्मणं ब्रह्म ज्येष्ठं देवाश्च सर्वे अमृतेन साकम्।।२३।।

ब्रह्मचारी ब्रह्म भ्राजद्बिभर्ति तस्मिन्देवा अधि विश्वे समोताः।
प्राणापानौ जनयन्नाद् व्यानं वाचं मनो हृदयं ब्रह्म मेधाम्।।२४।।

चक्षुः श्रोतं यशो अस्मासु धेह्यन्नं रेतो लोहितमुदरम्।।२५।।

तानि कल्पद् ब्रह्मचारी सलिलस्य पृष्ठे तपोऽतिष्ठत्तप्यमानः समुद्रे।
स स्नातो बभ्रुः पिंगलः पृथिव्यां बहु रोचते।।२६।।

(अथर्व. ११/५)

स्वस्तिवाचन (सूक्तम)

अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्।
होतारं रत्नधातमम्।। ।।१।। (ऋ. १/१/१)
स नः पितेव सूनवेऽग्ने सूपायनो भव।
सचस्वा नः स्वस्तये।। ।।२।। (ऋ. १/१/९)
स्वस्ति नो मिमीतामश्विना भगः स्वस्ति देव्यदितिरनर्वणः।
स्वस्ति पूषा असुरो दधातु नः स्वस्ति द्यावापृथिवी सुचेतुना।।३।।
(ऋ. ५/५१/११)

स्वस्तये वायुमुप ब्रवामहै सोमं स्वस्ति भुवनस्य यस्पतिः।
बृहस्पतिं सर्वगणं स्वस्तये स्वस्तय आदित्यासो भवन्तु नः।।४।।
(ऋ. ५/५१/१२)

विश्वे देवा नो अद्या स्वस्तये वैश्वानरो वसुरग्निः स्वस्तये।
देवा अवन्त्वृभवः स्वस्तये स्वस्ति नो रुद्रः पात्वंहसः।।५।। (ऋ. ५/५१/१३)
स्वस्ति मित्रावरुणा स्वस्ति पथ्ये रेवति।
स्वस्ति न इन्द्रश्चाग्निश्च स्वस्ति नो अदिते कृधि।।६।। (ऋ. ५/५१/१४)
स्वस्ति पन्थामनु चरेम सूर्याचन्द्रमसाविव।
पुनर्ददताघ्नता जानता सं गमेमहि।।७।। (ऋ. ५/५१/१५)
ये देवानां यज्ञिया यज्ञियानां मनोर्यजत्रा अमृता ऋतज्ञाः।
ते नो रासन्तामुरुगायमद्य यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः।।८।।
(ऋ. ७/३५/१५)

येभ्यो माता मधुमत्पिन्वते पयः पीयूषं द्यौरदितिरद्रिबर्हाः।
उक्थशुष्मान्वृषभरान्त्स्वप्नसस्ताँ आदित्याँ अनु मदा स्वस्तये।।९।।
(ऋ. १०/६३/३)

नृचक्षसो अनिमिषन्तो अर्हणा बृहद्देवासो मृतत्वमानशुः।
ज्योतीरथा अहिमाया अनागसो दिवो वर्ष्माणं वसते स्वस्तये।।१०।।
(ऋ. १०/६३/४)

सम्राजो ये सुवृधो यज्ञमाययुरपरिह्वृता दधिरे दिवि क्षयम्।
ताँ आ विवास नमसा सुवृक्तिभिर्महो आदित्याँ अदितिं स्वस्तये।।११।।
(ऋ. १०/६३/५)

को वः स्तोमं राधति यं जुजोषथ विश्वे देवासो मनुषो यतिष्ठन।
को वोऽध्वरं तुविजाता अरं करद्यो नः पर्षदत्यंहः स्वस्तये।।१२।।

(ऋ. १०/६३/६)

येभ्यो होत्रां प्रथमामायेजे मनुः समिद्धाग्निर्मनसा सप्त होतृभिः।
त आदित्या अभयं शर्म यच्छत सुगा नः कर्त सुपथा स्वस्तये।।१३।।

(ऋ. १०/६३/७)

य ईशिरे भुवनस्य प्रचेतसो विश्वस्य स्थातुर्जगतश्च मन्तवः।
ते नः कृतादकृतादेनसस्पर्यद्या देवासः पिपृता स्वस्तये।।१४।।

(ऋ. १०/६३/८)

भरष्विन्द्रं सुहवं हवामहेऽहोमुचं सुकृतं दैव्यं जनम्।
अग्निं मित्रं वरुणं सातये भगं द्यावापृथिवी मरुतः स्वस्तये।।१५।।

(ऋ. १०/६३/९)

सुत्रामाणं पृथिवीं द्यामनेहसं सुशर्माणमदितिं सुप्रणीतिम्।
दैवीं नावं स्वरित्रामनागसमस्रवन्तीमा रुहेमा स्वस्तये।।१६।।

(ऋ. १०/६३/१०)

विश्वे यजत्रा अधि वोचतोतये त्रायध्वं नो दुरेवाया अभिहुतः।
सत्यया वो देवहूत्या हुवेम शृण्वतो देवा अवसे स्वस्तये।।१७।।

(ऋ. १०/६३/११)

अपामीवामप विश्वामनाहुतिमपारातिं दुर्विदत्रामघायतः।
आरे देवा द्वेषो अस्मद्युयोतनोरु णः शर्म यच्छता स्वस्तये।।१८।।

(ऋ. १०/६३/१२)

अरिष्टः स मर्तो विश्व एधते प्र प्रजाभिर्जायते धर्मणस्परि।
यमादित्यासो नयथा सुनीतिभिरति विश्वानि दुरिता स्वस्तये।।१९।।

(ऋ. १०/६३/१३)

यं देवासोऽवथ वाजसातौ यं शूरसाता मरुतो हिते धने।
प्रातर्यावाणं रथमिन्द्र सानसिमरिष्यन्तमा रुहेमा स्वस्तये।।२०।।

(ऋ. १०/६३/१४)

स्वस्ति नः पथ्यासु धन्वसु स्वस्त्यप्सु वृजने स्वर्वति।
स्वस्ति नः पुत्रकृथेषु योनिषु स्वस्ति राये मरुतो दधातन।।२१।।

(ऋ. १०/६३/१५)

स्वस्तिरिद्धि प्रपथे श्रेष्ठा रेक्णस्वत्यभि या वाममेति।
सा नो अमा सो अरणे नि पातु स्वावेशा भवतु देवगोपा।।२२।।

(ऋ. १०/६३/१६)

इषे त्वोर्जे त्वा वायव स्थ देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मणऽआप्यायध्वमघ्न्याऽइन्द्राय भागं प्रजावतीरनमीवाऽअयक्ष्मा मा व स्तेनऽईशत माघशँ्सो ध्रुवाऽअस्मिन् गोपतौ स्यात बह्वीर्यजमानस्य पशून पाहि।।

।।२३।। (यजू. १/१)

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतोऽदब्धासोऽअपरीतासऽउद्भिदः।
देवा नो यथा सदमिद्वृधेऽअसननप्रायुवोरक्षितारो दिवेदिवे।।२४।।

(यजू. २५/१४)

देवानां भद्रा सुमतिऋर्जूयतां देवाना ᳬ रातिरभि नो निवर्तताम्।
देवानाᳬ सख्यमुपसेदिमा वयं देवा नऽआयुः प्रतिरन्तु जीवसे।।२५।।

(यजू. २५/१५)

तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियञ्जिन्वमवसे हूमहे वयम्।
पूषा नो यथा वेदसामसद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये।।२६।।

(यजु. २५/१८)

स्वस्ति नऽइन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु।।२७।।

(यजु. २५/१९)

भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।
स्थिरैरंगैस्तुष्टुवाᳬ सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः।।२८।।

(यजु. २५/२१)

अग्न आ याहि वीतये गृणानो हव्यदातये।
नि होता सत्सि बर्हिषि।।२९।। (सा.म.पू. १/१/१)

त्वमग्ने यज्ञानाᳬ होता विश्वेषाᳬ हितः।
देवेभिर्मानुषे जने।।३०।। (सा.म.पू. १/१/२)

ये त्रिषप्ताः परियन्ति विश्वा रूपाणि बिभ्रतः।
वाचस्पतिर्बला तेषां तन्वो [illegible] दधातु मे।।३१।। (अथर्व १/१/१)

शान्ति सूक्तम्

शं न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः शं न इन्द्रावरुणा रातहव्या।
शमिन्द्रासोमा सुविताय शं योः शं न इन्द्रापूषणा वाजयातौ।।१।।

(ऋ. ७/३५/१)

शं नो भगः शमु नः शंसो अस्तु शं नः पुरन्धिः शमु सन्तु रायः।
शं नः सत्यस्य सुयमस्य शंसः शं नो अर्यमा पुरुजातो अस्तु।।२।।

(ऋ. ७/३५/२)

शं नो धाता शमु धर्ता नो अस्तु शं न उरूची भवतु स्वधाभिः।
शं रोदसी बृहती शं नो अद्रिः शं नो देवानां सुहवानि सन्तु।।३।।

(ऋ. ७/३५/३)

शं नो अग्निर्ज्योतिरनीको अस्तु शं नो मित्रावरुणावश्विना शम्।
शं नः सुकृतां सुकृतानि सन्तु शं न इषिरो अभि वातु वातः।।४।।

(ऋ. ७/३५/४)

शं नो द्यावापृथिवी पूर्वहूतौ शमन्तरिक्षं दृशये नो अस्तु।
शं न ओषधीर्वनिनो भवन्तु शं नो रजसस्पतिरस्तु जिष्णुः।।५।।

(ऋ. ७/३५/५)

शं न इन्द्रो वसुभिर्देवो अस्तु शमादित्येभिर्वरुणः सुशंसः।
शं नो रुद्रो रुद्रेभिर्जलाषः शं नस्त्वष्टा ग्नाभिरिह शृणोतु।।६।।

(ऋ. ७/३५/६)

शं नः सोमो भवतु ब्रह्म शं नः शं नो ग्रावाणः शमु सन्तु यज्ञाः।
शं नः स्वरूणां मितयो भवन्तु शं नः प्रस्वः शम्वस्तु वेदिः।।७।।

(ऋ. ७/३५/७)

शं नः सूर्य उरुचक्षा उदेतु शं नश्चतस्रः प्रदिशो भवन्तु।
शं नः पर्वता ध्रुवयो भवन्तु शं नः सिन्धवः शमु सन्त्वापः।।८।।

(ऋ. ७/३५/८)

शं नो अदितिर्भवतु व्रतेभिः शं नो भवन्तु मरुतः स्वर्काः।
शं नो विष्णुः शमु पूषा नो अस्तु शं नो भवित्रं शम्वस्तु वायुः।।९।।

(ऋ. ७/३५/९)

शं नो देवः सविता त्रायमाणः शं नो भवन्तूषसो विभातीः।
शं नः पर्जन्तो भवतु प्रजाभ्यः शं नः क्षेत्रस्य पतिरस्तु शम्भुः।।१०।।

(ऋ. ७/३५/१०)

शं नो देवा विश्वदेवा भवन्तु शं सरस्वती सह धीभिरस्तु।
शमभिषाचः शमु रातिषाचः शं नो दिव्याः पार्थिवाः शं नो अप्याः।।११।।

(ऋ. ७/३५/११)

शं नः सत्यस्य पतयो भवन्तु शं नो अर्वन्तः शमु सन्तु गावः।
शं नः ऋभवः सुकृतः सुहस्ताः शं नो भवन्तु पितरो हवेषु।।१२।।

(ऋ. ७/३५/१२)

शं नो अज एकपाद्देवो अस्तु शं नोऽहिर्बुध्न्यः शं समुद्रः।
शं नो अपां नपात्पेरुरस्तु शं नः पृश्निर्भवतु देवगोपा।।१३।।

(ऋ. ७/३५/१३)

इन्द्रो विश्वस्य राजति।
शन्नोऽअस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे।। ।।१४।। (यजु. ३६/८)

शन्नो वातः पवताᳬं शन्नस्तपतु सूर्य्यः।
शं नः कनिक्रदद्देवः पर्जन्योऽअभिवर्षतु।। ।।१५।। (यजु. ३६/१०)

अहानि शम्भवन्तु नः शँ् रात्रीः प्रति धीयताम्।
अन्नऽइन्द्राग्नी भवतामवोभिः शन्नऽइन्द्रावरुणा रातहव्या।
शन्नऽइन्द्रापूषणा वाजसातौ शमिन्द्रासोमा सुविताय शं योः।।१६।।

(यजु. ३६/११)

शन्नो देवी रभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये।
शंयोरभिस्रवन्तु नः।। ।।१७।। (यजु. ३६/१२)

द्यौः शान्तिरन्तरिक्षँ् शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्ति।
वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वँ् शान्तिः शान्तिरेव
शान्तिः सा मा शान्तिरेधि।। ।।१८।। (यजु. ३६/१७)

तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुकमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शत
्शृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतम्भूयश्च
शरदः शतात्।। ।।१९।। (यजु. ३६/२४)

यज्जाग्रतो दूरमुदति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति।
दूरंगम ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।।२०।।

(यजु. ३४/१)

येन कर्माण्यपसो मनीषियों यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः।
यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।।२१।।

(यजु. ३४/२)

यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतम्प्रजासु।
यस्मान्नऽऋते किंचन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।।२२।।

(यजु. ३४/३)

येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत्यपरिगृहीतममृतेन सर्वम्।
येन यज्ञस्तायते सप्तहोता तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।।२३।।

(यजु. ३४/४)

यस्मिन्नृचः साम यजूꣳषि यस्मिन्प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः।
यास्मिँश्चित्तँ सर्वमोतं प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।।२४।।

(यजु. ३४/५)

सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिनऽइव।
हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।।२५।।

(यजु. ३४/६)

स नः पवस्व शं गवे शं जनाय शमर्वते।
शꣳ राजन्नोषधीभ्यः।। ।।२६।। (साम.उ. १/१/३)

अभयं नः करत्यन्तरिक्षमभयं द्यावापृथिवी उभे इमे।
अभयं पश्चादभयं पुरस्तादुत्तरादधरादभयं नो अस्तु।।२७।।

(अथर्व. १९/१५/५)

अभयं मित्रादभयममित्रादभयं ज्ञातादभयं परोक्षात्।
अभयं नक्तमभयं दिवा नः सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु।।२८।।

(अथर्व. १९/१५/६)

स्वराज्य सूक्तम्

इत्था हि सोम इन्मदें ब्रह्मा चकार वर्धनम्।
शविष्ठ वज्रिन्नोजसा पृथिव्या निः शशा अहिमर्चन्ननु स्वराज्यम्।।१।।

स त्वामदद् वृषा मदः सोमः श्लेनाभृतः सुतः।
येना वृत्रं निरद्भ्यो जघन्थ वज्रिन्नोजसार्चन्ननु स्वराज्यंम्।।२।।

प्रेह्यभीहि धृष्णुहि न ते वज्रो नि यंसते।
इन्द्र नृम्णं हि ते शवो हनो वृत्रं जया अपोऽर्चन्ननु स्वराज्यम्।।३।।

निरिन्द्र भूम्या अधि वृत्रं जघन्थ निर्दिवः।
सृजा मरुत्वतीरव जीवधन्या इमा अपोऽर्चन्ननु स्वराज्यम्।।४।।

इन्द्रो वृत्रस्य दोधतः सानुं वज्रेण हीळितः।
अभिक्रम्याव जिघ्नतेऽपः समीय चोदयन्नर्चन्ननु स्वराज्यम्।।५।।

अधि सानौ नि जिघ्नते वज्रेण शतपर्वणा।
मन्दान इन्द्रो अन्धसः सखिभ्यो गातुमिंच्छत्यर्चन्ननु स्वराज्यम्।।६।।

इन्द्र तुभ्यमिदद्रिवोऽनुत्तं वज्रिन्वीर्यम्।
यद्ध त्यं मायिनं मृग तमु त्वं माययावधीरर्चन्ननु स्वराज्यम्।।७।।

वि ते वज्रासो अस्थिरन्नवतिं नाव्या३ अनु।
महत्त इन्द्र वीर्यं बाह्वोस्ते बलं हितमर्चन्ननु स्वराज्यम्।।८।।

सहस्र साकमर्चत परि ष्टोभत विंशतिः।
शतैनमन्वनोनवुरिन्द्राय ब्रह्मोद्यतमर्चन्ननु स्वराज्यम्।।९।।

इन्द्रो वृत्रस्य तविषीं निरहन्त्सहसा सहः।
महत्तदस्य पौंस्यं वृत्रं जघन्वाँ असृजदर्चन्ननु स्वराज्यम्।।१०।।

हमे चित्तवं मन्यवे वेपेते भियसा मही।
यदिन्द वज्रिन्नोजसा वृत्रं मरूत्वाँ अवधीरर्चन्ननु स्वराज्यम्।।११।।

न वेपसा न तन्यतेन्द्र वृत्रो वि बीभयत्।
अभ्येन वज्र आयसः सहस्रभृष्टिरायतार्चन्ननु स्वराज्यम्।।१२।।

यद् वृत्रं तव चाशनिं वज्रेण समयोधयः।
अहिमिन्द्र जिघांसतो दिवि ते बद्बधे शवोऽर्चन्ननु स्वराज्यम्।।१३।।

अभिष्टने ते अद्रिवो यत्स्था जगच्च रेजते।
त्वष्टा चित्तव मन्यव इन्द्र वेविज्यते भियार्चन्ननु स्वराज्यम्।।१४।।

नहि नु यादधीमसीन्द्र को वीर्या परः।
तस्मिन्नृम्णमुत क्रतुं देवा ओजांसि सं दधुरर्चन्ननुं स्वराज्यम्।।१५।।

यामथर्वा मनुष्पिता दध्यधियमत्नत।
तस्मिन्ब्रह्माणि पूर्वथेन्द्र उक्था समग्मतार्चन्ननु स्वराज्यम्।।१६।।

प्रातः जागरण सूक्त

प्रातरग्निं प्रातरिन्द्रं हवामहे प्रातर्मित्रावरुणा प्रातरश्विना।
प्रातर्भगं पूषण ब्रह्मणस्पतिं प्रातः सोममुत रुद्रं हुवेम।।१।। ऋग.७/४१/१

प्रातर्जितं भगमुग्रं हुवेम वयं पुत्रमदितेर्यो विधर्ता।
आध्रश्चिद्यं मन्यमानस्तुरश्चिद् राजा चिद्यं भगं भक्षीत्याह।।२।।ऋग.७/४१/२

भग प्रणेतर्भग सत्यराधो भगेमां धियमुदवा ददन्नः।
भग प्र णो जनय गोभिरश्वैर्भग प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम।।३।। ऋग.७/४१/३

उतेदानी भगवन्तः स्यामोत प्रपित्व उत मध्ये अह्नाम्।
उतोदिता मघवन्त्सूर्यस्य वयं देवानां सुमतौ स्याम।।४।। ऋग.७/४१/४

भग एव भगवाँ अस्तु देवास्तेन वयं भगवन्तः स्यामः।
तं त्वा भग सर्व इज्जोहवीति स नो भग पुरएता भवेह।।५।। ऋग.७/४१/५

।। ओ३म् ।।

संगठन सूक्तम्

ओं सं समिद्युवसे वृषन्नग्ने विश्वान्यर्य आ।
इळस्पदे समिध्यसे स नो वसून्या भर।।१।।

हे प्रभो तुम शक्तिशाली हो, बनाते सृष्टि को।
वेद सब गाते तुम्हें हैं, कीजिए धन-वृष्टि को।।

ओं संगच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
देवा भागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते।।२।।

प्रेम से मिलकर चलो, बोलो सभी ज्ञानी बनो।
पूर्वजों की भाँति तुम कर्तव्य के मानी बनो।।

ओं समानो मन्त्रः समितिः समानी
समानं मनः सह चित्तमेषाम्।
समानं मन्त्रमभि मन्त्रये वः।
समानेन वो हविषां जुहोमि।।३।।

हों विचार समान सबके, चित्त मन सब एक हों।
ज्ञान देता हूँ बराबर, भोग्य पा सब नेक हों।।

ओं समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति।।४।।

हों सभी के दिल तथा संकल्प अविरोधी सदा।
मन भरे हों प्रेम से जिससे बढ़े सुख-सम्पदा।।

।। ओ३म् ओ३म् करो बेड़ा पार है ।।

वानप्रस्था गुलाबी देवी आर्या के जीवनकाल में

उनकी प्रेरणा से प्रकाशित साहित्य–

१. विश्वकल्याण निधि	२०५२-१९९५
२. विश्वकल्याण निधि (द्वितीय संस्करण)	२०५७-२०००
३. शतहस्त समाहार सहस्र हस्त संकिर	२०६०-२००४
४. वानप्रस्थ श्री सत्यनारायण आर्य (आर्य जगत् की दिव्य विभूति)	२०६४-२००७
५. विश्व कल्याण दिव्य भजनमाला (२००० पृष्ठ)	२०६५-२००९

आपकी पुण्य स्मृति में वानप्रस्थ सत्यनारायण आर्य द्वारा प्रकाशित साहित्य–

१. गृहोद्यान के दो माली	२०६६-२००९
२. आर्यों के नित्यकर्म	२०६६-२०१०
३. मानवता पर कलंक भ्रूणहत्या	२०६८-२०१०
४. निर्धनों के लिए ४०० फ्लैटों का प्रोजेक्ट	२०६८-२०१०

वानप्रस्था गुलाबी देवी आर्या दिव्य स्मृति ग्रन्थमाला :-

(विभिन्न विषयों पर आर्य जगत् के विद्वानों द्वारा ट्रेक्ट लेखन २०६८-२०११)

१. ईश्वर-जीव-प्रकृति	आचार्य ज्ञानेश्वर आर्य
२. गुलदस्ता	दोमादर लाल मूंधड़ा
३. जीवन का अन्तिम लक्ष्य–मोक्ष	स्वामी ऋतस्पति परिव्राजक
४. ईश्वर और जीव	डॉ. सुदर्शन देव आचार्य
५. प्रकृति	आचार्य दिलीप कुमार जिज्ञासु
६. वेद पढ़ें - आगे बढ़ें	डॉ. कमलनारायण वेदाचार्य
७. स्तुति प्रार्थना व उपासना का यथार्थ स्वरूप	स्वामी अमृतानन्द सरस्वती
८. आधुनिक भारत की सच्ची सन्त	आचार्य सुखदेव 'आर्य तपस्वी'
९. सुख-शान्ति के उपाय	स्वामी शान्तानन्द सरस्वती
१०. वैदिक सूक्त	आचार्य राहुलदेव शास्त्री
११. भागवत् कथा	आचार्य सोमदेव शास्त्री
१२. फूलझड़ियाँ	वानप्रस्थ सत्यनारायण आर्य

आपकी पुण्य स्मृति में प्रकाशित होने वाला साहित्य–

(क) वानप्रस्था गुलाबी देवी आर्या दिव्य स्मृति ग्रन्थमाला में अन्य कई ट्रेक्ट

(ख) भारत की सच्ची सन्त आदर्श नारी वानप्रस्था गुलाबी देवीजी की जीवन-यात्रा